IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 2, Issue 1, September 2022 Impact Factor: 6.252

Hkkjrh; Kku&ijEijk esa Hkksx o R;kx dk leUo;

Mk- dqlqe flag

Senior Auditor, District Audit Office, Cooperative Society & Panchayten, Ghaziabad

Lkkjka'k

भारतीय ज्ञान–परम्परा अद्वितीय ज्ञान व प्रज्ञा का प्रतीक है जिसमें ज्ञान व विज्ञान, लौकिक व पारलौकिक, कर्म एवं धर्म और भोग व त्याग का अद्भुत् समन्वय है। त्याग और भोग का समन्वय ही वर्तमान युग की घोषणा है और यही इस युग की समस्या भी है। जगत् के भीतर बहुत से मनुष्य भोग करते–करते जीवन की इहलीला को समाप्त कर देते हैं वे पार्थिव भोग करते हैं यह भोग स्पष्ट उनके मन को, विचारों को उनकी बुद्धि को भौतिक वस्तुओं से ऊपर नहीं उठने देते। मनुष्य केवल इन्द्रियों का समूह नहीं है बल्कि वह वास्तव में इन्द्रियातीत है। इसी कारण पंचेन्द्रियो द्वारा जगत् के भोगों का निरन्तर उपभोग करते रहने पर भी इन्द्रियातीत आत्मा तृप्त नहीं होती। भौतिक पदार्थों के भोग से स्वभावतः एक प्रकार की थकावट आ जाती है किन्तु भोग की स्पृहा को अस्वीकार करना भी भूल है। इसलिए भोग भी ज्ञानपूर्वक करना चाहिए। उसके साथ ऐसी चीज भी रखनी चाहिए जिससे भोग में डूबा न जा सके यही त्याग है।

Figure : 00 **References : 10** **Table : 00**

eq[; 'kCn& yhyk] vuklfDr] vkuUn] ;DrkgkJ fogkj] vklfä] yhyk] lgpj

iLrkouk&भोग की स्पृहा मनुष्य के हांडमांस में समाई हुई है। भोग–स्पृहा द्वारा संचालित होकर भौतिक जगत् से सम्बन्ध रखता है और विचरण करता है। जिस प्रकार जगत् रूप नाट्यशाला में भगवान् की लीला चलती है। भगवान् स्वयं भी भोग करते हैं वे अपनी सृष्टि का आनन्द, अपनी लीला का आनन्द भोग करते हैं। भोग की तृष्णा के मध्य से होकर मनुष्य छोटी चीज की तरफ फिर बड़ी चीज की ओर अग्रसर होता है किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि मनुष्य एक मात्र भोग में ही निमग्न हो जाय। इसलिए भोग को भी ज्ञानपूर्वक करना चाहिए। प्रत्येक वस्तु का उपभोग करते हुए हमारी भावना त्याग की होनी चाहिए। जितनी भौतिक सामग्री से हमारा जीवन सम्यक् रूप चल सके उतने का ही भोग करें। यही आनन्द का नैतिक सूत्र है। हमारी ऋषि–परम्परा इस सिद्धान्त की अनुयायी रही है कि भोग उतना ही जरूरी होना चाहिए जितना कि जीवन के लिए जरूरी है। मात्र भोगों में आसक्त हो जाना राक्षस प्रवृत्ति है। भोग में त्याग की भावना से सम्पूर्ण विश्व का कल्याण एवं स्वयं मनुष्य के आनन्द से वृद्धि होती है। त्यागपूर्वक भोग करने वाला अपने जीवन में सदा सन्तुष्ट रहता है। विवेकहीन होकर केवल भोगी बनना आसुरी प्रवृत्ति है और त्यागपूर्वक भोगना दैवी प्रवृत्ति है।

यजुर्वेद के ईशोपनिषद् में वर्णित है कि ईश्वर इस जगत् के कण–कण में व्याप्त है, जो भी जड़ व चेतन पदार्थ हैं उन सबका स्वामी ईश्वर है। इसलिए संसार के समस्त भौतिक पदार्थ का त्याग भाव से उपभोग करना चाहिए। आध्यात्मिक ग्रन्थ वेद में भी मनुष्य जीवन को उन्नत बनाने हेतु समस्त पदार्थ का त्यागपूर्वक भोग करने का संदेश है। संसार की प्रत्येक वस्तु पर परमात्मा का अधिकार है सम्पूर्ण भौतिक सम्पदा का स्वामी वह ईश्वर है। इसलिए उसकी सम्पदा को त्यागभाव से भोगने वाला

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 2, Issue 1, September 2022 Impact Factor: 6.252

ही मनुष्य सुखी होता है। भोग मनुष्य को बन्धन में बांधता है और त्याग मोक्ष–मार्ग प्र''ास्त करता है।

भर्तृहरि ने भोगवादी प्रवृत्ति का अपने वैराग्य शतक ग्रन्थ में धार्मिक चित्रण करते हुए कहा है कि विषयो को हमने नहीं भोगा अपितु विषयों ने हमारा भुगतान कर दिया। भोग की प्रवृत्ति का अन्त न हुआ अपितु सांसारिक तापों ने हमारा अन्त कर दिया। भोगी व्यक्ति केवल अपने उदरपूर्ति तक ही सीमित रहता है। त्याग ईश्वरीय मार्ग को प्रशस्त करता है। भोग व त्याग का यही सन्तुलन मानव जीवन के शा''वत शान्ति व मोक्ष की प्रप्ति में सहायक होता है।

गीता के बारहवें अध्याय के बारहवें श्लोक में भगवान ने कहा है, ''मर्म को न जानकर किये हुए अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है, ज्ञान से मुझ परमेश्वर का ध्यान श्रेष्ठ है और ध्यान से भी सब कर्मों के फल का त्याग श्रेष्ठ है क्योंकि त्याग से ही तत्काल ही परमशक्ति की प्राप्त होती है।[4]

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासा ज्जानाद्ध्यानं वि''िष्यते।

ध्यानाकर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्।। 12–12

यही त्याग की परम्परा भारत में अनादि काल से चली आ रही है और भारत के उत्थान पतन का इतिहास भी इसी भावना से जुड़ा हुआ दिखाई देता है। त्यागी पुरुष और नेता के पैदा होने से देश उन्नति करता गया जबकि इस भावना के कमजोर होने पर इतिहास की धारा दूसरी ओर मुड़ गयी।

भगवान् राम व कृष्ण की त्याग भावना सर्वविदित है। भगवान् राम ने पिता के वचन के पालन हेतु सम्पूर्ण राज्य छोड़ दिया जबकि श्रीकृष्ण ने मथुरा, मगध के शासक क्रमशः कंस व जरासंध को मारकर राजगद्दी न तो स्वयं न अपने परिवार के किसी सदस्य को बैठाये बल्कि उसी के परिवार के सदस्य को दिया। इसी प्रकार सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् विशाल मौर्य साम्राज्य की स्थापना करने वाला त्यागी चाणक्य था। सम्राट अशोक को बौद्ध जगत् में जो ख्याति मिली उसके त्यागी जीवन का परिणाम था। युद्ध का त्याग कर उन्होंने सत्य व अहिंसा का सन्देश घर–घर पहुँचाया। पुत्र व पुत्री को भिक्षु बनाकर तथागत को सन्देश सुनाने लंका भेजा।

यही भावना इसके पश्चात् गुप्त वंश में भी दिखाई पड़ती है। प्रसिद्ध गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त को अक्सर लोग यूरोप का नैपोलियन कहकर सम्बोधित करते हैं। उस समय लोग भूल जाते हैं कि दोनों में जमीन और आसमान का अन्तर था। इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि नैपोलियन यूरोप का ही नहीं वरन् संसार का अद्वितीय वीर था, उसने फ्रांस का नाम यूरोप में चमकाया और यूरोप में एक नई क्रान्ति पैदा की परन्तु समुद्रगुप्त से उसकी कोई तुलना नहीं। समुद्रगुप्त ने दक्षिणपथ की विजय करके राजाओं को केवल अपनी कैदी ही बनाया परन्तु नेपोलियन ने आस्ट्रिया में जोजेफ बोनापार्ट, ेमेज चैपंसपं में जैराम बोनापार्ट, स्पेन में अपने अन्य भाइयों को ही राजा बनाया। बहुत से देशों को फ्रांसीसी साम्राज्य में भी मिला लिया।

वाटर लू के युद्ध में पराजित होने के बाद भी नैपोलियन की स्वार्थी भावना न गई। एक स्वाभिमानी योद्धा की तरह उसने अपने को न प्रकट किया। कीरसीका द्वीप में अपने अन्तिम समय में वह कारागार में बैठा अपने पुत्रों के लिये विरासतनामा लिख रहा था।

मध्य युग में त्यागवृति की गति मन्द दिखाई पड़ती है। राजपूत राजे निज स्वार्थ के लिये लाखों व्यक्तियों का खून बहा देने में न हिचकते थे। पृथ्वीराज ने प्रेयसी संयोगिता के लिये अपने नामी–नामी सात सौ वीर सरदारों का वध करा दिया परिणाम हमारे सामने है। भारत पर विदेशियों ने अधिकार किया और देश गुलाम बना। यह हमारा पतन काल था।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 2, Issue 1, September 2022 Impact Factor: 6.252

राजपूताने में स्त्रियाँ राणा प्रताप के गीत इसीलिये गाती हैं कि उस नर सपूत ने विशाल साम्राज्य के सम्राट अकबर के सामने सर न झुकाया और 14 वर्षों तक राज पाट त्याग कर जंगल की खाक छानता रहा। शिवाजी ने अपना राज कई बार समर्थ गुरू रामदास के चरणों में भेंट कर दिया था। वह अपने को केवल राज का प्रबन्धक ही समझते थे।

भारत में अंग्रेजों के आगमन के बाद भी त्याग की गति के दोनों पहलू दिखाई पड़ते हैं। प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम सन् 1857 के असफलता के अनेक कारणों में से एक प्रमुख कारण यह भी था कि अधिकांश नेता निजी स्वार्थों को ही ध्यान में रखकर युद्ध का संचालन कर रहे थे। झाँसी की रानी का शौर्य हमारे सामने न प्रकट होता यदि झाँसी राज अंग्रेजी राज्य में न मिला लिया जाता। जनहित की भावना से यदि यह संग्राम लड़ा जाता तो अंग्रेज भारत से 110 वर्ष पूर्व ही चले गये होते।

लेकिन कांग्रेस के स्थापना काल से ज्यों–ज्यों त्यागी दयानन्द सरस्वती, राजाराम मोहनराय, ईश्वरचन्द विद्या सागर, लोकमान्य तिलक, गोपालकृष्ण गोखले, फीरोजशाह मेहता, लाला लाजपत राय, गाँधी जवाहर और पटेल व अन्य ज्ञात अथवा अज्ञात नेता पैदा होते गये, भारत की बेड़ियाँ क्रमशः टूटती गईं। वह पुण्य बेला भी आई जब हम अपने को स्वतन्त्र कह सकें।

क्या यह दिवस राष्ट्र पिता बापू के त्याग का ही परिणाम नहीं है?

त्यागी और भोगी में केवल भावनाओं का ही अन्तर होता है। त्यागी निज हित की परवाह न करके जनहित का चिन्तन करके अपना कार्य करता है और भोगी की सारी क्रियायें निज हित के लिये होती है। विश्व का कोई भी व्यक्ति त्यागी बने बिना सच्चे यश का अधिकारी नहीं बन सकता।

इसलिये धर्म तत्व को जानने वाले महापुरुषों का कहना है कि वास्तव में अनासक्ति ही त्याग है और आसक्ति ही भोग है। मनुष्य सब छोड़ देने पर एक मात्र कोपीन में भी आसक्त होकर रह सकता है, या उसके मन में आसक्ति की भावना दमन नहीं हुई है उत्तम वस्त्र धारण करने पर भी मनुष्य अनासक्त रह सकता है यदि भगवान की कृपा से उसे अनासक्ति की भावना प्राप्त हो गई है। बंगाल के श्री चैतन्य महाप्रभु ने सर्वत्यागी सन्यासी छोटा हरिदास को भोगासक्त मानकर अस्वीकार किया था और परम योगी राय रामानन्द को अनासक्त बतलाकर बहुत आदर किया था। गीता में भी भगवान् ने ''युक्ताहारविहार'' की बात ही कही है। इसका आशय योग और भोग का समन्वय ही है।

हमारे देश में कितने ही आध्यात्मवादी सम्प्रदाय प्राचीनकाल से त्याग की ही प्रशंसा करते आये हैं। अधिकांश साधु भोग को पतन का मार्ग बतलाकर उससे बचने की शिक्षा देते आये हैं। पर वास्तव में ऐसा त्याग समाज के अधिकांश मनुष्यों के लिये व्यवहारिक नहीं हो सकता। यह मानव प्रकृति के विरुद्ध है। इस प्रकार एकमात्र त्याग का आदर्श जन समाज को देने से वह केवल मात्र आदर्श ही रह जाता है उस पर लोग आचरण नहीं करते। उदाहरण के लिये भारतवर्ष के हिन्दू समाज में 50–60 लाख साधु सन्यासी हैं। यद्यपि ये सब चिमटा और कमण्डल धारी ही नहीं है और बहुत से तो भोग विलास करने वाले भी हैं तो भी वे सब जनता को त्याग का ही उपदेश देते रहते हैं। पर इसका परिणाम क्या निकला? आदर्श एक तरफ जा रहा है और समाज की जीवनधारा दूसरी तरफ बह रही है। करोड़ों हिन्दू इन साधु–सन्यासियों को दो–चार पैसे देते हैं, हाथ भी जोड़ते हैं, पर कोई उनके उपदेशानुसार त्यागमय जीवन व्यतीत नहीं करता। इस प्रकार का आदर्श जनता के सम्मुख उपस्थित करने का परिणाम यह होता कि उसके आदर्श और आचरण ठीक न होने और आदर्श के अनुकूल आचरण न होने से, समाज का आचरण दूषित माना जाता है।

इसलिए वर्तमान युग का आदर्श त्याग और भोग का समन्वय है। यह ऐसा आदर्श है कि जिस पर चलने से हिन्दू–समाज ही नहीं, संसार भर कल्याण हो सकता है। न तो मनुष्य भोग में डूब जायेगा, न त्याग का आडम्बर करेगा, वरन् वह त्याग और

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 2, Issue 1, September 2022 Impact Factor: 6.252

भोग दोनों के ऊपर स्थित रहेगा। पर मनुष्य वस्तु को भोग नहीं करेगा। वह बड़ी चीज को भोग करेगा, मनुष्य ऐसी सारी वस्तु का भोग करेगा, जिससे थकावट नहीं आती, जो दो दिन में समाप्त नहीं हो जाती। पर वह उपभोग करेगा श्री भगवान् की अनन्त लीला में एक सहचर की हैसियत से। यही पूर्ण मानवता का, पूर्ण सामंजस्य का जीवन है। इसी में पूर्व के त्यागमय आदर्श तथा परिश्रम के भोगमय आदर्श का समन्वय है।

इस प्रकार भारतीय ज्ञान–परम्परा में भोग व त्याग का समन्वय मिलता है। वर्तमान समय में बहुत से संस्थान इस विषय में कार्य कर रहे हैं। भारतीय ज्ञान–परम्परा को जन–जन तक पहुँचाने हेतु विभिन्न संस्थान कार्यरत है। इसमें से एक है– राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान जिसने बेसिक शिक्षा, संस्कृत भाषा और साहित्य भारतीय दर्शन और प्राचीन भारतीय ज्ञान के कई क्षेत्रों को पुनर्जीवित करने हेतु भारतीय ज्ञान–परम्परा नामक एक नये स्ट्रीम की शुरूआत की है। इस स्ट्रीम के अन्तर्गत माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तरों पर संस्कृत व हिन्दी माध्यम के पांच पाठ्यक्रम वेद अध्ययन, संस्कृत व्याकरण, भारतीय दर्शन, संस्कृत साहित्य व संस्कृत भाषा। इसके अतिरिक्त आयुर्वेद, योग, वेदपाठ, न्यायशास्त्र, ज्योतिष शास्त्र, अनुप्रयुक्त संस्कृत व्याकरण, नाट्य कला के पाठ्यक्रमों का निर्माण किया जा रहा है जिससे शिक्षार्थियों को समृद्ध भारतीय संस्कृति से अवगत कराया जाए एवं मूल्यों को विकसित किया जा सके।

बेसिक शिक्षा स्तर से ही योग का ज्ञान देने हेतु पाठ्यक्रम भी उपलब्ध है, न केवल भारत में बल्कि विदेशों में प्रवासी भारतीय केन्द्र के माध्यम से भारतीय ज्ञान–परम्परा को विकसित किया जा रहा।

fu'd'k&निष्कर्षतः भोग व त्याग का समन्वय मानव जीवन हेतु अति आवश्यक है। भोग से मनुष्य बन्धन में बंधा रहता है और त्याग मोक्ष की ओर अग्रसर करता है। स्वयं गीता का अंतिम सन्देश कर्म में त्याग, कर्मफल की इच्छा का त्याग, साथ ही अपने समस्त कर्मों को ईश्वर को अर्पित कर देना त्याग का आदर्श स्थापित करना है। त्याग से ही भोग का स्वाद बढ़ जाता है। ईशावास्योपनिषद में एक सूत्र है– तेन त्यक्तेन भुज्जीथा। इसका अर्थ है जो त्याग करते हैं वही भोग पाते हैं। यही अस्तित्व का रहस्य है। ओशो ने त्याग व भोग को एक साथ सिखाने का प्रयास किया। ओशो न त्यागवादी है, न भोगवादी वे जीवनवादी है, दमन के सख्त खिलाफ थे। त्याग व भोग के समन्वय न केवल निजी जीवन के लिए हितकर है बल्कि इससे बहुत सारी पर्यावरणीय समस्याओं का हल हो सकता है। संसाधनों का त्यागमय उपयोग कर भावी पीढ़ी के लिए उसे संजोकर रखना ही सतत् विकास है। इसी के प्रयोग से 2030 तक सतत् विकास लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

lanHk xzUFk

1. प्रो0 बसन्त शिन्दे : भारतीय ज्ञान–प्रणाली, टवस.ए भीष्मा प्रकाशन पेज 242–243
2. प्रो0 हरिशंकर पाण्डेय : भारतीय ज्ञान–परम्परा विमर्श, भारत भारती प्रकाशन, वाराणसी पेज 143–144
3. श्रीमद्भगवद्गीता : अध्याय 12 श्लोक 12।।
4. श्री स्वामी अलोकानन्द : अखण्ड ज्योति, विश्व गायत्री परिवार, मार्च 1957।
5. भर्तृहरिः वैराग्यशतक पेज 21।
6. ओशो : सम्भोग से समाधि की ओर, पेज 221।
7. महात्मा गाँधी : त्याग अनिवार्य है, हरिजन 30.01.1937 पृष्ठ 407–408
8. स्वामी विवेकानन्द : विवेकवाणी–तेइसवे वार्तालाप और सम्वाद (रामकृष्ण परमहंस व स्वामी विवेकानन्द) 28 अगस्त 2011।

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in

ISSN 2581-9429 IJARSCT

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 2, Issue 1, September 2022 Impact Factor: 6.252

9. भोग और त्याग, महावीर : मेरी दृष्टि में से, आचार्य रजनीश, सम्पादक : दयानन्द भार्गव, पेज 142–143

10. इलाचन्द्र जोशी : त्याग का भोग, लोकभारती प्रकाशन, पेज 29–30